☆ रामायण महारानी का देश : फ़ीजी

दया प्रकाश सिन्हा
आई.ए.एस. (अवकाश प्राप्त)

भारत से कई हजार किलोमीटर दूर दक्षिण प्रशान्त महासागर में स्थित एक छोटा–सा द्वीप है फ़ीजी। इसकी राजधानी सूवा के भव्य नागरिक सभागार (सिविक ऑडोटिरयम) में बहु–प्रचारित, बहु–प्रसारित संगीत–नृत्य का आयोजन है, एक संगीत शाम। संचालक महोदय घोषणा करते हैं कि अब कार्यक्रम प्रारम्भ होने जा रहा है। उस समय जो वस्तु अनायास ध्यान आकर्षित करती है, वह है स्पीकर–स्टैण्ड पर सामने, छोटे–छोटे बल्बों से बना – 'ऊँ' का चिह्न।

कार्यक्रम प्रारम्भ होता है। गीता का श्लोक लाउडस्पीकर पर बजता है– 'यदा यदा हि धर्मस्य...'। श्लोक के समाप्त होते ही मंच पर रंग बिरंगे प्रकाश के वृत्त नाचने लगते हैं, और फिर एक कर्णभेदी झंकार के साथ, बाँगो, काँगो, ड्रम वगैरह अनेक पाश्चात्य वाद्ययंत्र झनझनाकर बज उठते हैं। फिर दो घंटे तक पॉप संगीतः एक हाथ में माइक पकड़कर, फीजी के गायकों और गायिकाओं द्वारा, किशोर कुमार का याहू–मार्का फिल्मी गीतों का नाच–नाचकर गायन....रम्बा–सम्बा, शेक, जर्क, रॉक, ट्विस्ट, हूला....फिर ग्रास–स्कर्ट (छाल के रेशों की घुटनों तक की लुंगी) पहने, काले रंग के वनवासियों द्वारा एक सुन्दरी पर आक्रमण, बलात्कार का कैबरे–नृत्य! फीजी के भारतवंशियों द्वारा आयोजित इस नितांत पाश्चात्य कार्यक्रम में भी एक झलक भारतीयता की थी। कहाँ ? स्पीकर स्टैण्ड पर बने **'ऊँ'** में, गीता के श्लोक में।

सूवा से उन्नीस किलोमीटर दूर एक गाँव में रामायण यज्ञ का आयोजन है। सारा वातावरण जय–जयकार से गूँज रहा है–

सत्य सनातन धर्म की जय!
सब देवी–देवताओं की जय!
रामायण महारानी की जय!
भारतमाता की जय!

पाँच दिन का रामायण का अनुष्ठान! धरती से लगभग 30 सेमी. ऊँचे प्लेटफार्म पर रामायण महारानी छोटी सजी चौकी पर स्थापित हैं। प्लेटफॉर्म तस्वीरों, गुब्बारों और कागज की झालरों से सजा है। तस्वीरें सब धार्मिक हैं। भारत से आयातित राम–सीता की जुगल–जोड़ी, कंधे पर राम–लखन को बैठाए बजरंगबली, अपना सीना अपने ही हाथों से चीरकर, उसमें राम–दरबार की झाँकी दिखाते हुए हनुमानजी, सिंहवाहिनी दुर्गा, खड्गधारिणी काली। न्यूज़ीलैंड के बने हुए गुब्बारों पर 'मेड इन न्यूज़ीलैंड' के छापे के अलावा घोड़े पर माला लिए बैठा यूरोपियन 'नाइट' भी।

प्लेटफॉर्म पर 'रामायण महारानी' के पीछे हैं कथावाचक पंडित जी, जो पेशे से नौकरी करते हैं, लेकिन बाकी समय रामायण वाचन। बहुत प्रसिद्ध हैं वे इसके लिए। उनके पास, उनको और रामायण महारानी को चारों ओर से घेरकर बैठे कुछ युवक। कुछ दूर पीछे ढ़ोलक, मंजीरा, नाल, चिमटा और हारमोनियम लिए संगीतज्ञ बैठे हैं।

युवा दल सुर ताल में चौपाई गाता है। फिर संगीतज्ञ थोड़ी देर उसी सुर–ताल में हारमोनियम, मंजीरा, ढ़ोलक आदि बजाते हैं। फिर रामायणी जी चौपाई का अर्थ बाँचते हैं, और फिर सब मिलकर जयकारा लगाते हैं :– ***"बोल, रामायण महारानी जी की जै!"*** क्रम चलता रहता है। भक्तिरस की इस धारा में मुझ अयोध्यावासी का मन गद्गद हो जाता है। आँखे नम हो जाती हैं। कौन कहता है, फ़ीजी और भारत में बारह–तेरह हजार किलोमीटर का अन्तर है। सौ वर्षों से उपर का बिछुड़ाव है। भारत के इतना निकट! कैसा विलक्षण है यह फ़ीजी देश!
दक्षिणी प्रशांत महासागर में, आस्ट्रेलिया के पूरब, अनेक द्वीप हैं। जो प्रकृति की सुन्दरता से भरपूर हैं। फ़ीजी को तो अब अनेक लोग जानने लगें हैं। लेकिन सोलोमन, न्यू केलेडोनिया, तुवुलू, गिलबर्ट आइलैंड, टोंगा इत्यादि का नाम भारत में बहुत कम लोगों को मालूम है। हृदयग्राही सौन्दर्य और सदाबहार मौसम की सौगात के सन्दर्भ में एक कथा यहाँ प्रचलित है। जब ईश्वर ने पृथ्वी को पहली बार बनाया, पृथ्वी पर प्राकृतिक सौन्दर्य बिल्कुल नहीं था। पृथ्वी के प्रथम संसकरण से स्वयं ईश्वर संतुष्ट नहीं हुआ, अतएव उसने यहाँ–वहाँ कुछ सँवारना–सुधारना शुरू किया, किन्तु इसी दौरान असावधानी से साक्षात् सौन्दर्य ईश्वर की तश्करी से छिटककर दक्षिणी प्रशान्त महासागर में गिर गया, और उससे ये द्वीप बन गएं। अतएव यह द्वीप समूह मूर्तिमान सौन्दर्य है। गहरे, अपार क्षितिज तक फैले हुए सौन्दर्य की उत्ताल तरंगें, शस्य–श्यामला पहाड़ियों की मनमोहक हरीतिमा, शत–शत रंग के फूल और शोख–चटक कलियाँ, षोड्शी के मन–सा क्षण–क्षण बदलने बाला मौसम, अभी–अभी धूप, अभी–अभी रिमझिम और फिर धूप....इन सब द्वीपों में अग्रणी है फ़ीजी।

एशिया, अफ्रीका और आस्ट्रेलिया के आधुनिक इतिहास की भाँति फ़ीजी की भी इतिहास की भाँति फ़ीजी का भी इतिहास यूरोप के इतिहास से जुड़ा है। सोलहवीं और सत्रहवीं शताब्दी में पूरब के मसालों के व्यापार के लिए यूरोप के देशों में प्रारम्भ हुई होड़ उपनिवेशों के लिए संघर्ष बन गई।

समय के अन्तराल से फ़ीजी द्वीप समूह पर ब्रितानी सत्ता स्थापित हो गई। इतिहास की अप्रत्याशित घटना! आपस में ही एक–दूसरे से लड़ने वाले सामंतों ने सुरक्षा के लिए फ़ीजी द्वीप समूह स्वयं ही ब्रितानी सरकार को समर्पित कर दिया – 10 अक्तूबर, 1874 को।

भाग्य की बात है कि 1875 में एक अंग्रेजी लड़ाकू जहाज फीजी के बन्दरगाह में चेचक की महामारी लेकर आया, जिससे मूल फीजीवासियों की संख्या अचानक कम हो गई। उनकी आर्थिक क्षति के परिप्रेक्ष्य में तत्कालीन गवर्नर सर आर्थर हेमिल्टन गार्डन नें भारत से शर्तबन्द मजदूरों को लाने की योजना का श्रीगणेश किया। दास व्यापार में यूरोपवासी पिछली तीन–चार शताब्दियों में काफी महारत हासिल कर चुके थे। मानव–व्यापार का नवीन अध्याय उन्होंने

फ़ीजी में भी प्रारम्भ किया, जिसके फलस्वरूप 1879 में 'लेबनीदास' नामक जहाज में भारतीय शर्तबन्द मजदूरों का प्रथम दल फ़ीजी में उतारा गया। फिर तो हर साल भारत से आने वाले जहाज सैकड़ों भारतवासियों को फ़ीजी लाते रहे, जब तक कि यह प्रथा 1917 में बन्द नहीं हुई।

अड़तीस वर्षों में लगभग 61,000 भारतीय शर्तबन्द मजदूर फ़ीजी लाए गए। ये मजदूर ब्रिटिश सरकार द्वारा एक 'एग्रीमेंट' (समझौते) के अन्तर्गत फ़ीजी लाए जाते थे, जिसे वह 'गिरमिट' (एग्रीमेंट का अपभ्रंश) कहते थे। गिरमिट के पाँच साल काटने के बाद अधिकांश मज़दूर फ़ीजी में ही रह गए। केवल 10–15 प्रतिशत वापस गए।

ब्रितानी सरकार इन मजदूरों को फीजी लाकर उन गोरों को बेंच देती थी, जिन्हें अपने विशाल फार्मों पर गन्ने की खेती के लिए मजदूरों की आवश्कता थी। इस संबन्ध में अपने फीजी प्रवास के दौरान श्री धनीराम से हुई बातचीत याद आती है। उस समय श्री धनीराम इक्यानबें वर्ष के थे। जब वह अपनी मस्त अल्हड़ तबीयत से मजबूर होकर 20 वर्ष की आयु में अपने भाइयों के साथ हुई जरा–सी कहा–सुनी का बहाना लेकर कानपुर के अपने गाँव से भागे थे, तब उनका नाम बिहारी था। सरकार के रिक्रूटिंग एजेंटों (भरती करने वाले प्रतिनिधियों) के चक्कर में जब पलक मारते धनी बनने की आकांक्षा में फीजी आए, तो घरवालों से छिपने के लिए उन्होंने अपना नाम बदल लिया – धनीराम। धनीराम ने अपनी झुर्रीदार चमकती आँखों में व्यंग्य की हँसी के साथ कहा, ***"सुनते हो बाबू, मुलुक से यहाँ लाकर हमें कोठीवाले बाबू को बेच दिया गया। गाय–गोरू बेचे जाते हैं, लेकिन गोरी सरकार ने हमें बेच दिया। आदम जात को बेच दिया। गाय, बैल, बकरी–सा!"***

गिरमिट का प्रारम्भिक इतिहास श्रम, यातना, पीड़ा, क्लेश, आँसू, बीमारी और मौत का इतिहास है, तो साथ ही यह संघर्ष, संकल्प, दृढ़ निश्चय और विजय का इतिहास भी है।

अपने देश से हजारों किलोमीटर दूर अपमान और घोर यंत्रणाओं, गोरे अधिकारियों के लोमहर्षक और दारुण अत्याचारों, रहने–खाने की दुर्व्यवस्था, स्त्रियों की अपेक्षाकृत कमी से उत्पन्न विवाह और परिवार जैसी संस्थाओं के विघटन, यौन–अपराधों के आधिक्य तथा ईर्ष्या और प्रतिद्वन्द्विता की हत्याओं में परिणति, रोग से जर्जर अवस्था में भी खेतों पर श्रम की विवशता, सजा, पिटाई, जुर्माना, जेल, सांत्वना और सुरक्षा का नितांत अभाव, दरिद्रता, अज्ञान, अशिक्षा और भय का यह पावशिक संसार किस नरक से कम था! इससे छुटकारा पाने के लिए अनेक लोगों ने आत्महत्या कर ली। दवाई के अभाव में अनेक बीमारी के शिकार हो गए।

भारतीय श्रम ने विषम और विषैली परिस्थितियों में भी फीजी की धरती को अपने खून और पसीने से सींचकर सोना बना दिया। वह काम गोरे नहीं कर सकते थे, जिसे पास के द्वीपों से लाए गए द्वीपवासी नहीं कर पाए, जिसे चीनीं नही कर पाए, उसे भारतीयों ने कर दिखाया। जिस धरती का चंदन निकालकर गोरों ने उसे सुगंधहीन कर दिया था, वही धरती मीठे गन्नों से लहलहा उठी।

गिरमिट की झंझा ने जात–पाँत, परिवार–परंपरा, व्यक्तिगत विचार इत्यादि को तोड़कर चकनाचूर कर दिया। किन्तु हर विघटन में नई रचना के तत्व छिपे होते हैं। ब्राह्मण, ठाकुर, अहीर, बनिया, कुरमी, चमार, रैदास, पासी, बढ़ई, सुनार, सब मिलकर एक हो गए। यही नहीं, हिन्दु–मुसलमान की विभाजन रेखा भी बहुत कुछ समाप्त हो गई।

भारत का एक भाषा का सपना भी साकार हुआ। फीजी में गिरमिट के अन्तर्गत प्रायः सब ही प्रान्तो से भारतवासी यहाँ आए। बिहार, बंगाल, उत्तर प्रदेश, पंजाब, राजस्थान गुजरात, आन्ध्र प्रदेश, तमिलनाडु आदि प्रत्येक प्रान्त के गिरमिटियों के वंशज आज फीजी में मिल सकते हैं। किन्तु सर्वाधिक गिरमिटए पूर्वी उत्तर प्रदेश से आए, अतः उनकी भाषा ही आपसी बोलचाल के लिए व्यवहार में आने लगी। समय के साथ, पूर्वी उत्तर प्रदेश में बोली जाने वाली 'अवधी हिन्दी' ही यहाँ के सब भारतवंशियों की एकमात्र भाषा बन गई। यह बात जरूर है कि भौगोलिक अन्तर तथा समय के अन्तराल के साथ यहाँ बोली जाने वाली अवधी, उत्तर प्रदेश की अवधी से कुछ भिन्न हो गई है। कहीं उसमें अंग्रेजी के शब्द आ गये हैं तो कहीं फीजी के, जैसे – **बकंदुआ, गोड़वा में नेलुआ लग गइस!** (*हाय सत्यानाश! पैर में कील लग गई*)

'बकंदुआ' फीजी भाषा का एक शब्द है, जिसका अर्थ है 'सत्यानाशी', एकदम मुसीबत वाला, आदि। नेलुआ अंग्रेजी शब्द नेल (कील) से बना है। बाकी गोड़ (पैर) शब्द शुद्ध अवधी का है। गोड़, मूड़, गटई, बिहान, बकइयाँ, बहिनी, चीन्हत, नगीचे आदि शब्द सुनकर फैजाबाद, सुल्तानपुर, बाराबंकी, गोंडा, बहराइच आदि की याद आ जाती है, जो हिन्दी के श्रेष्ठतम ग्रंथ तुलसीकृत 'रामचरितमानस' की भाषा है।

भाषा की निकटता के कारण ही 'रामचरितमानस' भारतवंशियों का सबसे अधिक प्रिय और आदरणीय ग्रंथ है। उनके गिरमिटिया पूर्वजों में से जो कुछ साक्षर थे, पोथी–पुराण बाँच लेते थे, अपनी कथरी–पोटली में देश से रामायण का गुटका भी लेते आए और उसके सहारे ही कष्टों को झेलते हुए वे टूटे नहीं, मिटे नहीं। गिरमिटिया के लिए फीजी प्रवास राम–वनवास से कम न था। निर्वासन और यातना के इस एकाकी निबिड़ अंधकार में रामायण ही पिता थी, सहायक और बंधु थी, तब ही तो रामायण 'रामायण महारानी' बन गई। 'बोल रामायण महारानी की जै।' भक्तों की जय–जयकार याद आ जाती है।

गिरमिटियों में कुछ रामानन्दी और कबीरपंथी भी थे और कुछ आर्य समाजी भी। यद्यपि कबीरपंथी और रामानन्दी अनुयायिओं ने अपने भजनों द्वारा गिरमिटियों की भारतीय पहचान को बनाए रखने में सहायता की, किन्तु इस संदर्भ में आर्य समाज की भूमिका विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

गिरमिट प्रथा में आए लोग अधिकांश रूप से निरक्षर थे, किन्तु उनमें अनेक पढ़े लिखे लोग भी थे। जो परिस्थितिवश, धोखे से बलपूर्वक, स्थानीय गिरमिट एजेंटों द्वारा भेज दिए गये

थे, इनमें एक थे– बिहारीलाल, जो पंजाबवासी थे और हाईस्कूल (तत्कालीन एंट्रेंस) पास थे। उस समय 'एंट्रेंस' पास होना कोई मामूली बात नहीं थी। दूसरे थे तत्कालीन ग्वालियर राज्य के भिंड ग्राम निवासी पण्डित शिवदत्त, जिन्होंने आठ वर्ष तक मथुरा में संस्कृत का अध्ययन किया था, और जो 1904 ई. में कुली (गिरमिट) बनाकर फीजी लाए गए थे। इन दोनों ने मिलकर 25 दिसंबर, 1904 को सामाबूला (सूवा) में बाबू मंगल सिंह की कुटी पर 'आर्य समाज' की स्थापना की।

यद्यपि प्रथम भारतीय पाठशाला राकी–राकी नामक नगर में खोली गई थी, किन्तु यह व्यक्तिगत प्रयत्न मात्र था। योजनाबद्ध रूप से, पूरे फीजी में संस्थागत स्कूल खोलने का जो कार्य आर्य समाज ने किया, उससे भारतवंशी कभी उऋण नहीं हो सकते। आर्य समाज ने कन्या पाठशालाएँ खोलकर महिला–जागरण के कार्य को भी आगे बढ़ाया। आज फीजी के हर नगर में डी.ए.वी स्कूल हैं। बाद में, अनेक संस्थाओं ने, जिसमें तमिल–संगम, सनातन धर्म प्रतिनिधि सभा, रामकृष्ण मिशन, मुस्लिम लीग इत्यादि प्रमुख हैं, अपने–अपने क्षेत्र में सामाजिक जागरण, संगठन और शिक्षा के कार्य को प्रमुखता दी।

भारतवंशियों की अन्ततः सफलता के मूल में इन संस्थाओं द्वारा शिक्षा क्षेत्र में किया गया सराहनीय कार्य ही है। तब ही तो उन्होंने 15 मई, 1979 को गिरमिट की शताब्दी बड़े जोश–खरोश से मनाई थी।

इस संदर्भ में उल्लेखनीय है कि 15 मई, 1929 को गिरमिट की अर्धशताब्दी भारतवंशियों ने शोक–दिवस के रूप में मनाई थी। अपने बाजुओं पर काली पट्टी बाँधी थी। किन्तु अगले पचास वर्षों में स्थिति बदल गई। उन्होंने श्रम, धीरज और क्षमता से हारी हुई बाजी जीत में बदल दी। शिक्षा, व्यापार, कला–कौशल तथा ज्ञान–विज्ञान के क्षेत्र में वे आज अग्रणी हैं। इसीलिए यातनाद्वीप में प्रवेश के प्रथम दिन के प्रति उनके अवचेतन की कटुता समाप्त हो चुकी है। यह दिवस अब उनके श्रम की विजय का प्रतीक है। अपने बाहुबल से अपने भाग्य की रेखा स्वयं बनाने का साक्षी स्वयं बनाने का साक्षी है। अतएव 15 मई, 1979 को आयोजित गिरमिट शताब्दी दिवस ने विश्वबंधुत्व की आवश्कता को रेखांकित करने के अतिरिक्त, श्रम और संकल्प की अपराजयेता का संदेश भी पूरी मानवता को दिया।

फीजी का भारतवंशी दिल से हिन्दुस्तानी है। उसके भारतप्रेम की कोई सीमा नहीं। मरने के पहले, भारतमाता की चरणधूलि माथे से लगाने और गंगा मैया में एक डुबकी लगाने की साध हर भारतवंशी के हृदय में छिपी रहती है।

किन्तु तस्वीर का एक दूसरा पहलू भी है। वर्तमान सम्पन्नता में जब भारतवंशियों को याद आता है कि उनके पिता या पितामह भारत के अभावग्रस्त जीवन से बचने के लिए यहाँ आए थे, तो एक प्रकार का आत्म–तोष का भाव उसके मन में आ जाता है। अच्छा ही हुआ जो चले आए, नहीं तो उन्हें भी उसी दरिद्रता का सामना करना पड़ता, जिसका उनके दादा–परदादा, आजा–आजी ने किया। अभाव–ग्रस्त भारत के चित्र की स्मृति उनको विरासत में मिली है। तब ही तो फीजी में एक अस्पताल के भारतवंशी ड्राइवर की पत्नी ने अपनी

निष्कपट सरलता में भारत से वहाँ डेपूटेशन पर गए एक डॉक्टर की पत्नी से पूछा, ''क्या हिन्दुस्तान में दोनों वक्त खाने को मिलता है?'' संयोगवश वह डॉक्टर सींक–सलाई जैसे दुबले–पतले नहीं थे। वे खाए–पिए, मोटे–ताजे तोंदधारी थे। अतः डॉक्टर की पत्नी को उत्तर देना भी सहज था। उन्होंने उत्तर दिया, ''क्या डॉक्टर साहब हवा खाकर इतने मोटे हुए हैं?''

विरासत में पाई भारत की दरिद्रता के इस चित्र में चटख रंग भरने का काम किया है पश्चिम के समाचार–साधनों ने। भारत की दरिद्रता, अभाव, दुर्घटनाओं, नैसर्गिक आपत्तियों के समाचार और चित्र जिस मात्रा में यहाँ प्रकाशित हुए हैं, उससे एक साधारण भारतवंशी के लिए वास्तविकता न समझ पाना स्वाभाविक ही है। जागरूक लोग तो जानते हैं, पर बहुत से साधारण ग्रामवासी भारतवंशी यह नहीं जानते कि पहले भारत में पिन और पेंसिल तक विदेशों से बनकर आते थे और अब वह अपना हवाई जहाज और टैंक ही नहीं बनाता, बल्कि इस्पात के कारखानों से निर्यात भी करता है।

फिर भी भारतवंशी का भारत के साथ गहरा लगाव ज्यों–का–त्यों है। तभी तो भारतवंशी स्वयं भारत की कितनी ही आलोचना क्यों न कर लें, किन्तु अगर कोई दूसरा भारत की अवमानना करता है तो वह भड़ककर उठ खड़ा होता है, भारत की पैरवी के लिए। साथ–साथ भारतवंशी का उतना ही गहरा लगाव है, अपने देश फ़ीजी के लिए भी, जिसकी सम्पन्नता में उसका रक्त है, जिसके लहलहाते गन्ने की फसलों में उसका श्रम है। फ़ीजी आज उसका अपना देश ही नहीं, भविष्य भी है।

बी–255, सेक्टर–26,
नोएडा–201301
दूरभाष : 95120–2524911
dpsinha50@hotmail.com